लाचार कश्मीरियों पर हमला कर भगवाधारियों ने एक बार फिर किया अपनी कायरता का प्रदर्शन

मदन कोथुनियां

वैसे तो कश्मीर को भारतवासी धरती का स्वर्ग कहते हैं। मगर आतंकवाद के दौर के बाद घाटी नरक बन चुकी है। अलगाववादी नेताओं व पाकिस्तान समर्थित आतंकी समूहों ने जो नुकसान इस स्वर्ग/जन्नत का किया है उसकी भरपाई होती प्रतीत नहीं हो रही है। एक तरफ कश्मीरी युवाओं को बरगलाकर आतंकवाद के दलदल में धकेला जा रहा है तो दूसरी तरफ ऐसे कश्मीरी युवक भी हैं जो देश भर में घूम-घूमकर ड्राई फ्रूट्स व कश्मीरी वूलन का सामान बेचकर अपना जीवनयापन कर रहे हैं।

2012 में एक कश्मीरी युवक कंबल लेकर मेरी कॉलोनी में आया था। मेरी जिज्ञासा हमेशा कश्मीर के हालातों को जानने की रही थी तो मैंने उनसे काफी जानकारी ली। बात करते-करते वो फफक कर रोने लगा। उसने मुझे बताया कि 2 भाई आतंक की राह पर चले गए और दोनों मारे गए। बूढ़े मां-बाप हैं और मैं अकेला देखभाल करने वाला। वहां रोजगार कुछ है नहीं तो यह काम कर रहा हूं। इससे मेरा घर चल रहा है। कश्मीरी नेताओं की पाकिस्तान परस्ती व दिल्ली के नेताओं के अनिर्णय की हालत के कारण घाटी बर्बाद हो गई है।

कल जब लखनऊ के डालीगंज पुल पर ड्राई फ्रूट्स बेच रहे कश्मीरियों को तथाकथित विश्व हिंदू दल के गुंडे बजरंग सोनकर के साथ मिलकर पत्थरबाज बताकर पीट रहे थे तो मेरे जेहन में उस युवक की लाचारी दुबारा जिंदा हो गई! अपने मां-बाप, बीवी बच्चों सहित पूरे कुनबे के सपनों को ढोकर ये लोग सड़क किनारे ड्राई फ्रूट्स बेच रहे हैं। जब इनकी पिटाई की खबर इनके घर व दोस्तों तक पहुंची होगी तो उनके दिल में क्या प्रतिक्रिया आई होगी? क्या ये चंद गुंडे नफरत का संदेश देने में कामयाब नहीं हो गए?

आतंकियों के साथ बंदूक के साथ डील करना विश्व में मान्य है मगर क्षेत्र या समुदाय के सभी लोगों को एक ही तराजू में तोलकर डील करने की मानसिकता समस्या को समाधान से निकालकर और उलझाती जाएगी। चुनावी मोड़ पर खड़े देश मे ये गुंडे हौसला कहां से पाते हैं कि खुद हाथों में डंडे लेकर सड़कों पर कानूनपालक बने घूम रहे हैं?

इन गुंडों ने भगवा पहनकर भगवे को बदनाम किया है, हिन्दू धर्म को बदनाम किया है जिसके कारण आज हर भगवाधारी शर्मिंदा हो रहा है। भगवा ऐसा तो नहीं था! लखनवी तहजीब ऐसी तो नहीं थी! यूपी पुलिस का धन्यवाद कि गुंडे बजरंग सोनकर को गिरफ्तार करके सलाखों के पीछे भेज दिया। कश्मीरी युवाओं से गुजारिश है कि इन गुंडों की मानसिकता को देश की मानसिकता समझने की भूल न करें। जब ये गुंडे इन युवकों को पीटने लगे तो सीना तानकर जो इनके साथ खड़ा हुआ वो भी इस देश का,लखनऊ का वाशिंदा है। इन गुंडों को जेल भेजने वाला सिस्टम भी इसी देश का है। विश्वास रखिये एक दिन सवेरा जरूर होगा और लौटेगी कश्मीर की फिजाओं में रौनक और लखनवी तहजीब की मिठास।

स्त्री अकेली नहीं और अलग नहीं

किशन कालजयी

भारत का स्वतन्त्रता संग्राम अपनी चेतना और अपने मनोविज्ञान में कई तरह के न्यायिक अधिकारों के संघर्ष को समाहित किये हुए था। इसलिए भारत में स्त्री आन्दोलन का इतिहास स्वतन्त्रता संग्राम से अलग नहीं है। भारत का आजादी का आन्दोलन अपने मूल ढाँचे में भले पितृ सत्तात्मक रहा हो लेकिन स्त्री अधिकारों की परवाह भी इसी आन्दोलन के दायरे में होती रही। हालांकि अन्य संगठनों ने भी समय समय पर स्त्री अधिकार के लिए आवाज उठायी है।

सामाजिक सुधार और स्वतन्त्रता आन्दोलन में सक्रिय स्त्री-संघर्ष बीसवीं सदी की शुरुआत में स्त्री अधिकारों के प्रति भी सजग हुआ। पूरे देश में महिलाएँ विभिन्न स्तरों पर संगठित हुईं और विभिन्न महिला संगठनों ने भी महिलाओं को एकजुट किया।

1908 में हुआ लेडिज कॉंग्रेस का सम्मलेन हो या 1917 में गठित विमेंस इंडियन असोसिएशन जैसे संगठन, ये इस बात के प्रमाण हैं कि कॉंग्रेस के बाहर भी महिलाओं की सक्रिय भागीदारी कायम थी। हो सकता है स्त्री की इसी एकजुटता को ध्यान में रखकर 1918 में स्त्री-अधिकार के लिए कॉंग्रेस ने एक बैठक बुलाई और -महिलाओं को मताधिकार दिया जाए – इस आशय का प्रस्ताव पेश किया, मदन मोहन मालवीय के अलावा सभी ने समर्थन किया और प्रस्ताव पारित हो गया। जिस मताधिकार के लिए पश्चिम की महिलाओं को वर्षों का संघर्ष करना पड़ा वह भारत की महिलाओं को आसानी से हासिल हो गया। मताधिकार मिल जाने का मतलब यह नहीं कि भारत में महिलाओं की स्थिति अच्छी हो गयी। अभी भी भारत में दहेज के लिए हत्या, महिलाओं का शोषण, उनके साथ हिंसा और दुर्व्यवहार जारी है।

भारत में आजादी के पूर्व के स्त्री आन्दोलन की एक सीमा यह रही कि उसकी यात्रा हिन्दू विचारधारा के प्रभाव में हुई। यही कारण था कि रमाबाई जैसी महत्त्वपूर्ण स्त्री नेत्री को हिन्दू धर्म छोड़ना पड़ा। दरअसल हिन्दू धर्म में स्त्रियों के प्रति एक सामन्ती स्वभाव और स्त्री-स्वतन्त्रता के निषेध के बीज अन्तर्निहित हैं।

विनायक दामोदर सावरकर हों या मदन मोहन मालवीय, स्त्री-मुक्ति के सन्दर्भ में उनकी अवधारणा सामन्ती और परम्परावादी ही रही है। सावरकर ने अपनी किताब (सिक्स ग्लोरियस इपोक्स ऑफ इण्डियन हिस्ट्री) में शिवाजी द्वारा मुगलों को हराने की चर्चा की है। शिवाजी को इस बात के लिए उन्होंने कोसा है कि मुगल सेना जब भाग गयी तो मुस्लिम महिलाओं को अपने हरम में ले जाने के बजाय शिवाजी ने उन्हें आदरपूर्वक मुक्त कर दिया। स्त्रियों के प्रति सामन्ती स्वभाव का यह बीज हिन्दू संगठनों में अच्छी तरह फैला है जो वेलेंटाइन डे पर प्राय: हिंसक तरीके से प्रकट होते रहा है।

दरअसल भारत में आजादी के 70 वर्षों के बाद भी स्त्री विमर्श के सन्दर्भ में एक सन्तुलित सैद्धान्तिकी का निर्माण नहीं हो पाया है। भारतीय समाज का मर्दवादी दृष्टिकोण स्त्री को देह से ज्यादा कुछ नहीं मानता। यौनाचार के समय पुरुष अपनी तमाम कोशिशों में अपने पुरुष होने के अहंकार को ही तुष्ट करना चाहता है। प्रसिद्ध नारीवादी चिन्तक केट मिलेट ने अपनी पुस्तक 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स' में भी इस स्थापना को पुष्ट किया है। विडम्बना यह कि भारत की मौजूदा नारीवादी दृष्टि इसी मर्दवाद का विलोम रचना चाहती है। वह चाहती है- चौखट से मुक्ति,घर से मुक्ति, प्रदर्शनप्रियता की मुक्ति और देह की भी मुक्ति। दुर्भाग्यपूर्ण तो यह है कि अधिकांश मामलों में स्त्री-पुरुष सम्बन्ध का आधार यौन सम्बन्ध ही होता है। यौनाचार के मामले में जो स्त्री या पुरुष अक्षम होते हैं,उन पर सम्बन्ध विच्छेद का खतरा मंडराता रहता है। स्त्री-पुरुष सम्बन्ध की यह शारीरिकता एक बड़ा सांस्कृतिक संकट है।

दरअसल अपने यहाँ स्त्री पैदा नहीं होती,वह बनाई जाती है। बचपन से ही लड़के और लड़कियों में अतार्किक भेदभाव किया जाने लगता है। 'लड़का होकर तुम रो रहे हो?,' 'लड़की होकर तुम बाहर खेलने जाओगी?' इस तरह की बातें कह कह कर बचपन में ही लड़के को स्वछंदता और लड़कियों को आँसू थमा दिए जाते हैं। स्त्रियों और पुरुषों के बीच का यह बंटवारा गलत है। प्रकृति ने दोनों में जो अन्तर किया है, शारीरिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर सिर्फ उस अन्तर को ही ध्यान में रखकर मानवीय गरिमा के साथ स्त्री अस्मिता को स्वीकार किया जाना चाहिए।

पश्चिम के स्त्री आन्दोलनों और स्त्री विमर्श से तुलना करते हुए या उससे प्रेरणा लेते हुए कई बार भारत में भी उसकी दरकार समझी जाती है। यह सच है कि स्त्री विमर्श एक वैश्विक विचारधारा है,लेकिन दुनिया भर की स्त्रियों का संघर्ष एक जैसा नहीं होता। इसतरह की अपेक्षा अव्यावहारिक इसलिए है कि प्रत्येक देश की अपनी एक सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है। समकालीन स्त्री विमर्श पुरुषों द्वारा थोपे गये उस यौन शुचिता के आवरण से मुक्त हो चुका है जिसके पीछे लिंगभेद का मर्दवादी दृष्टिकोण और स्त्री देह के दोहन की अवधारणा है। स्त्री विमर्श इस अवधारणा को खारिज कर चुका है, लेकिन इस विमर्श को अभी और आगे की यात्रा करनी है। स्त्री विमर्श का वह भारतीय अध्याय अभी लिखा जाना बाकी है जिसमें स्त्री अस्मिता के साथ घर भी बचा रहेगा।

फिर ट्रोल किए गए रवीश, खास दल के आईटी सेल का नफरती अभियान शुरू, बांटे प्रशांत,जावेद और नसीर के नंबर

रवीश कुमार

आईटी सेल का काम शुरू हो गया है। मेरा, प्रशांत भूषण, जावेद अख़्तर और नसीरूद्दीन शाह के नंबर शेयर किए गए हैं। 16 फरवरी की रात से लगातार फोन आ रहे हैं। लगातार घंटी बजबजा रही है। वायरल किया जा रहा है कि मैं जश्न मना रहा हूं। मैं गद्दार हूं। पाकिस्तान का समर्थक हूं। आतंकवादियों का साथ देता हूं। जब पूछता हूं कि कोई एक उदाहरण दीजिए कि मैंने ऐसा कहा हो या किया हो तो इधर-उधर की बातें करने लगते हैं। उनसे जवाब नहीं दिया जाता है।

पुलवामा की घटना से संबंधित कुछ मूल प्रश्न हैं। राज्यपाल सत्यपाल मलिक ने कई चैनलों पर कहा है कि सुरक्षा में चूक हुई है। 2500 जवानों का काफिला लेकर नहीं निकला जाता है। हाईवे की सुरक्षा को लेकर जो तय प्रक्रिया है उसका पालन नहीं हुआ। अब इन लोगों को राज्यपाल से पूछना चाहिए, प्रधानमंत्री और गृहमंत्री से पूछना चाहिए कि इस पर आप क्या कहते हैं। यह सवाल कई लोगों के मन में हैं ।

क्या अच्छा नहीं कि इसके बाद भी पूरा विपक्ष और जनता सरकार के साथ खड़ी है। कोई इस्तीफा तक नहीं मांग रहा है। जब इतने लोग खड़े हैं तो हम जैसे दो चार नाम को लेकर अफवाहें क्यों फैलाई जा रही हैं। ताकि कोई सरकार से सवाल न करे? कोई प्रधानमंत्री मोदी से यह न पूछे कि शोक के समय आप किसी सरकारी कार्यक्रम में अपने लिए वोट कैसे मांग सकते हैं। आप झांसी में दिया गया उनका भाषण खुद सुनें। प्रधानमंत्री को राजनीति करने की छूट है मगर बाकी सबको नहीं।

गोदी मीडिया के ज़रिए सही सूचनाएं लोगों तक नहीं पहुंचने दी जा रही हैं। अर्ध सैनिक बलों को पता है कि उनकी बात करने वाला इस गोदी मीडिया में हमीं हैं। हमने ही उनके पेंशन से लेकर वेतन तक की मांग में उनका साथ दिया है। सीआरपीएफ और बीएसएफ का कमांडेंट जीवन लगा देता है मगर अपने ही फोर्स का नेतृत्व उसे नहीं मिलता। इस पर चर्चा हमने की है। क्या बीजेपी का अध्यक्ष कोई कांग्रेस का हो सकता है? तो किस हिसाब से युद्धरत स्थिति में तैनात सीआरपीएफ और बीएसफ का नेतृत्व आईपीएस करता है? सांसद और विधायक को पेंशन मिलती है, मगर हमारे जवानों को पेंशन क्यों नहीं मिलती है? यह सवाल मैं पहले से करता रहा हूं और इस वक्त भी करूंगा।

जुलाई 2016 में ब्रिटने में सर जॉन चिल्कॉट ने 6000 पन्नों की एक जांच रिपोर्ट दी थी। 12 खंडों में 26 लाख शब्दों से यह रिपोर्ट बनी थी। सात साल तक जांच के बाद जब रिपोर्ट आई तो नाम दिया गया द इराक इन्क्वायरी। सर चिल्कॉट को ज़िम्मेदारी दी गई थी कि क्या 2003 में इराक पर हमला करना सही और ज़रूरी था? यह उस देश की घटना है जिसने कई युद्ध देखे हैं। युद्ध को लेकर आधुनिक किस्म की नैतिकता और भावुकता इन्हीं यूरोपीय देशों से पनपी है।

उस वक्त ब्रिटेन में इराक युद्ध के खिलाफ दस लाख लोग सड़कों पर उतरे थे। तब उन्हें आतंकवाद का समर्थक कहा जाता था। ब्रिटेन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पहली बार किसी युद्ध में शामिल हुआ था। कहा जाता था कि सद्दाम हुसैन के पास मानवता को नष्ट करने वाला रसायनिक हथियार हैं। जिसे अंग्रेजी में वेपन ऑफ मास डिस्ट्रक्शन कहा जाता है। चिल्काट ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि इराक के पास रसायनिक हथियार होने के खतरों के जिन दावों के आधार पर पेश किया गया उनका कोई औचित्य नहीं था।

सर चिल्काट की रिपोर्ट इस नतीजे पर पहुंची है कि ब्रिटेन ने युद्ध में शामिल होने का फैसला करने से पहले शांतिपूर्ण विकल्पों का चुनाव नहीं किया। उस वक्त सैनिक कार्रवाई अंतिम विकल्प नहीं थी।

जब युद्ध हुआ था तब टोनी ब्लेयर को हीरो की तरह मीडिया ने कवर पेज पर छापा था। टोनी ब्लेयर की छवि भी मज़बूत और ईमानदार की थी। चिल्काट कमेटी ने लिखा कि ब्लेयर ने एक मुल्क के लाखों लोगों को मरवाने के खेल में शामिल होने के लिए अपने मंत्रिमंडल से झूठ बोला। अपनी संसद से झूठ बोला। जब यह रिपोर्ट आई तब लेबर पार्टी के नेता जेर्मी कोर्बिन ने इराक और ब्रिटेन की जनता और उन सैनिकों के परिवारों से माफी मांगी जो इराक युद्ध में मारे गए या जिनके अंग कट गए।

पहले लंदन का एक अखबार है द सन। उसकी हेडलाइन थी 'सन बैक्स ब्लेयर'। ब्लेयर के हाथ में सन है और सन अखबार ब्लेयर के समर्थन में है। जब चिल्काट कमेटी की रिपोर्ट आई तब इसी सन अखबार ने हेडलाइन छापी 'वेपन ऑफ मास डिसेप्शन'। हिन्दी में मतलब सामूहिक धोखे का हथियार। डेली मिरर अखबार ने तब जो कहा था वो दस साल बाद सही निकला। 29 जनवरी 2003 के अखबार के पहले पन्ने पर छपा था, ब्लेयर की दोनों हथेलियां खून से सनी हैं। लिखा था ब्लड ऑन हिन हैंड्स- टोनी ब्लेयर।

हर देश की अपनी परिस्थिति होती है। बस आप इस कहानी से यह जान सकते हैं कि कई बार किसी अज्ञात मकसदों के लिए राष्ट्राध्यक्ष मुल्क को युद्ध में धकेल देते हैं। इसलिए किसी भी तरह के सवाल से मत घबराइये। सवाल देश विरोधी नहीं होते हैं। उससे सही सूचनाओं को बाहर आने का मौका मिलता है और जनता में भरोसा बढ़ता है। जनता भीड़ नहीं बनती है। युद्ध का फैसला भीड़ से नहीं बल्कि रणनीतिकारों के बीच होना चाहिए। युद्ध एक व्यर्थ उपक्रम है। इससे कोई नतीजा नहीं निकलता है।

कई जगहों पर कश्मीरी छात्रों को मारा जाने लगा है। क्या यह सही है? जो आतंकवादी मसूद अज़हर था उसे तो जहाज़ से छोड़ आए, कौन छोड़ कर आया आप जानते हैं, लेकिन जिनका कोई लेना देना नहीं उन्हें आप मार रहे हैं। सीआरपीएफ ने कश्मीरी छात्रों की मदद के लिए हेल्पलाइन नंबर जारी किया है। सीआरपीएफ के ट्वीटर हैंडल पर जाकर देखिए उसमें कहा गया है कि कहीं भी हों, हमसे संपर्क करें। क्या आपमें हिम्मत है कि सीआरपीएफ पर उंगली उठाने की? सलाम है सीआरपीएफ को।

इसलिए मुझे फोन करने से कोई लाभ नहीं। प्रधानमंत्री से पूछिए। सारे जवाब उनके पास हैं। आपस में ज़हर मत बांटिए। एकजुट रहिए। सारी बहस तर्क के आधार पर कीजिए। पाकिस्तान को सबक बेशक सिखाना चाहिए। हर हाल में सिखाना चाहिए मगर पहले नागरिक होने का सबक सीख लें तो बेहतर होगा। हम शोक में हैं। ठीक है कि सारा जीवन पूर्ववत चल रहा है। मगर ख़्याल आता है तो मन उदास होता है। संयम बनाए रखें। धूर्त नेताओं से सावधान रखें।